आयुर्वेद को जैन संतों की देन

—डॉ० तेज सिंह गौड़

जैन संतों ने प्रायः सभी विषयों पर अपनी कलम चलाई है। जहाँ तक आयुर्वेद का प्रश्न है, इस विषय पर भी जैन संतों द्वारा रचित साहित्य विपुल मात्रा में मिलता है किन्तु यह नहीं कहा जा सकता है कि सर्वप्रथम कौन से आयुर्वेद ग्रंथ की रचना हुई और उसका रचनाकार कौन था ? यदि आगम ग्रंथ का अध्ययन किया जाये तो भी आयुर्वेद सम्बन्धी सामग्री पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध हो जाती है। प्रस्तुत निबंध में केवल उन्हीं संतों का संक्षिप्त परिचय देने का प्रयास किया जायेगा जिन्होंने आयुर्वेद के स्वतंत्र ग्रंथों की रचना की है।

उग्रादित्याचार्य कृत '**कल्याणकारक**' में कुछ पूर्ववर्ती आयुर्वेदाचार्यों का विवरण मिलता है जिसके अनुसार सर्वप्रथम समन्तभद्र का नाम आता है जो पूज्यपाद के भी पूर्व हुए बताये जाते हैं। इन्होंने '**सिद्धान्त रसायन कल्प**' नामक वैद्यक ग्रंथ की रचना की जो अठारह हजार श्लोकों में समाप्त हुआ था। सम्पूर्ण ग्रंथ तो उपलब्ध नहीं है किन्तु इसके दो-तीन हजार श्लोक ही उपलब्ध हैं। इस ग्रंथ में पारिभाषिक शब्दों का प्रयोग तथा उनके संकेत भी दिये गये हैं। इसलिये अर्थ करते समय जैनमत की प्रक्रियाओं-परम्पराओं को ध्यान में रखकर अर्थ करना पड़ता है। समन्तभद्र द्वारा रचित दूसरा ग्रंथ '**पुष्पायुर्वेद**' बताया गया है। गर्व के साथ यह कहा जा सकता है कि अभी तक पुष्पायुर्वेद का निर्माण जैनाचार्यों के अतिरिक्त और किसी ने भी नहीं किया है। आयुर्वेद संसार में यह एक अद्भुत वस्तु है। इस ग्रंथ में अठारह हजार जाति के कुसुम (पराग रहित) पुष्पों से ही रसायनौषधियों के प्रयोगों को लिखा है।

दूसरे क्रम पर पूज्यपाद देवनंदी का विवरण है। ये अनेक रसायन, योगशास्त्र और चिकित्सा की विधियों के ज्ञाता थे। साथ ही शल्य एवं शालाक्य विषय के भी विद्वान आचार्य थे। पूज्यपाद द्वारा '**वैद्यसार**' ग्रंथ की रचना की गई, ऐसी जानकारी मिलती है। आपके जीवन की विशिष्ट घटनाओं को देखने से भी आपके आयुर्वेद ज्ञान की जानकारी मिलती है।[1] कुछ अन्य ग्रंथ भी आपके द्वारा रचे गये मिलते हैं जिन पर अध्ययन-अन्वेषण अपेक्षित है।

पूज्यपाद के बाद श्री गुम्मट देवमुनि हुए हैं जिन्होंने **मेरुतंत्र** नामक वैद्यक ग्रंथ की रचना की है। इन्होंने प्रत्येक परिच्छेद के अंत में पूज्यपाद स्वामी का बहुत ही आदरपूर्वक स्मरण किया है।

पूज्यपाद के भानजे सिद्धनागार्जुन ने नागार्जुन कल्प, नागार्जुन कक्ष पुट आदि ग्रंथों का निर्माण किया। इन्होंने 'वज्रखेचर गुटिका' नामक स्वर्ण बनाने की रत्नगुटिका भी तैयार की थी।

ये कुछ आयुर्वेदाचार्य हैं जिनका विवरण उग्रादित्याचार्य ने अपने कल्याणकारक में दिया है। इनका यह ग्रंथ वि० सं० ८७१ अर्थात् ई० सन् ८१५ का लिखा हुआ है। इनके गुरु का नाम श्रीनंदि था और इनका अधिकांश समय एक चिकित्सक के रूप में व्यतीत हुआ।

इनका कल्याणकारक नामक ग्रंथ पच्चीस परिच्छेदों के अतिरिक्त अंत में परिशिष्ट रूप में अरिष्टाध्याय और हिताध्याय से परिपूर्ण है। आयुर्वेद की दृष्टि से यह ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है। इस ग्रंथ में औषध में माँस की निरुपयोगिता को सिद्ध किया है और आचार्य ने स्वयं नृपतुंग वल्लभेन्द्र की सभा में इस प्रकरण का प्रतिपादन किया है। कल्याणकारक एक उपयोगी और

१. समाधितंत्र और इष्टोपदेश, प्रस्तावना, पृष्ठ ५ से ८ एवं १३, १४ देखें।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

महत्वपूर्ण ग्रंथ है। रोग, रोगी, चिकित्सक आदि पर भी इस में विस्तृत रूप से विचार किया गया है। ग्रंथ मुदित हो चुका है तथा उपलब्ध भी है।

महाकवि धनंजय :—

इनका समय वि० सं० ९६० है। इन्होंने **धनंजय निघण्टु** लिखा है जो वैद्यक के साथ कोश ग्रंथ है। इस ग्रंथ का दूसरा नाम **'नाममाला'** भी है। इनका दूसरा ग्रंथ 'विषापहार स्तोत्र' है। इसके सम्बन्ध में कहा जाता है कि कवि के पुत्र को सर्प ने डस लिया था अतः सर्प विष को दूर करने के लिये ही इस स्तोत्र की रचना की गई।

सोमदेव सूरि :—

इन्होंने आयुर्वेद के स्वतंत्र ग्रंथ की रचना नहीं की किन्तु इनके **'यशस्तिलक'** में आयुर्वेद विषयक सामग्री पर्याप्त रूप से मिलती है जिससे इनके आयुर्वेद ज्ञान का पता चलता है। इन्हें वनस्पति शास्त्र का भी अच्छा ज्ञान था। इनका समय दसवीं शताब्दी है।

कीर्तिवर्मा :—

यह चालुक्यवंशीय महाराज त्रैलोक्य मल का पुत्र था। त्रैलोक्यमल ने सन् १०४४ से १०६८ तक राज्य किया। कीर्तिवर्मा के बनाये हुए ग्रंथों में से **'गोवैद्य'** ग्रंथ उपलब्ध होता है। इसमें पशुओं की चिकित्सा पर विस्तार से विचार किया गया है।

कवि मंगराज :—

इनका ग्रथ **'खगेन्द्रमणि दर्पण'** विष शास्त्र सम्बन्धी ग्रंथ है। इनका जन्म स्थान वर्तमान मैसूर राज्यान्तर्गत मुगुलिपुर था। इन्हें उभय कवीश, कविपद्मभास्कर और साहित्य वैद्यविद्याम्बुनिधि की उपाधियां प्राप्त थीं। स्वर्गीय आर० नरसिंहाचार्य के मतानुसार इनका समय ई० सन् १३६० है। खगेन्द्रमणि दर्पण में सोलह अधिकार हैं। कवि का कहना है कि ये सोलह अधिकार तीर्थंकर पुण्यकर्म के निदान स्वरूप षोडश भावनाओं के स्मृति चिन्ह हैं। इस ग्रंथ के वर्ण्य विषयों को देखते हुए प्रमाणित होता है कि विष चिकित्सा के लिये कन्नड़ का यह ग्रंथ **खगेन्द्रमणि दर्पण** महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

आशाधर :—

जैन साहित्य में यह अपने समय के दिगम्बर सम्प्रदाय के बहुश्रुत प्रतिभा सम्पन्न और महान् ग्रंथकर्ता के रूप में प्रकट हुए हैं। धर्म और साहित्य के अतिरिक्त न्याय, व्याकरण, काव्य, अलंकार, योग, वैद्यक आदि अनेक विषयों पर इनका अधिकार था और इन विषयों पर इनका विशाल साहित्य भी मिलता हैं। इनके जीवनवृत्त पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है। अतः उस पर यहां लिखना आवश्यक प्रतीत नहीं होता है। इन्होंने वाग्भट के प्रसिद्ध ग्रन्थ **'अष्टांगहृदय'** पर **'उद्योतिनी'** या **'अष्टांगहृदयद्योतिनी'** नामक टीका लिखी थी। यह ग्रन्थ अब अप्राप्य है। इसका उल्लेख हरिशास्त्री पराड़का और पी. के. गोड़े ने किया है। यह टीका बहुत महत्वपूर्ण थी। पीटर्सन ने इसकी हस्तलिखित प्रति का उल्लेख नहीं किया है, परन्तु यदि इसकी कहीं कोई प्रति मिल जाए तो अष्टांग हृदय के व्याख्या साहित्य में महत्वपूर्ण वृद्धि होगी। आशाधर की ग्रन्थ प्रशस्ति में इसका उल्लेख है—

आयुर्वेदविदामिष्टं व्यक्तु वागभटसंहिता ।
अष्टांगहृदयोद्योतं निबंधमसृजच्च यः ॥[1]

भिषक् शिरोमणि हर्षकीर्ति :—इनका समय ठीक-ठीक ज्ञात नहीं। ये नागपुरिया तपागच्छ के चन्द्रकीर्ति के शिष्य थे और मानकीर्ति इनके गुरु थे। इनके दो ग्रन्थ मिलते हैं—१ योग चिंतामणि, और २ व्याधिनिग्रह। ये दोनों ही ग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं। दोनों ही ग्रन्थ चिकित्सा के लिये उपयोगी भी हैं। इनमें कुछ नवीन योगों का मिश्रण है जो इनके स्वयं के चिकित्सा ज्ञान की महिमा के द्योतक हैं। ग्रन्थ जैन आचार्य की रक्षा हेतु लिखा गया है।[2]

लेखक ने ग्रन्थ के अंत में अपने को प्रवरसिंह (संभवतः कोई राजा) के शिर का अवतंस कहा है तथा गुरु का नाम

---

१. पं० चैनसुखदास स्मृति ग्रन्थ, पृ० २७९-८१.

२. *जैन जगत नवम्बर १९७५ पृ० ५२.*

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

चन्द्रकीर्ति बतलाया है। अंत में यह कामना की है कि जिस प्रकार योगप्रदीप और योगशत है उसी प्रकार **योगचिंतामणि** है। इससे पता चलता है कि हर्षकीर्ति के समय ये दो ग्रन्थ अत्यन्त प्रचलित थे।

लेखक ने ग्रन्थ रचना में आत्रेय, चरक, सुश्रुत, वाग्भट, अश्विन, हारीत वृन्द, चिकित्साकलिका, भृगु, भेद निदान (माधव), कर्मविपाक ग्रन्थों का उपयोग किया है। इस सम्बन्ध में वह लिखता है कि नूतन पाठ विधान का पण्डितगण आदर नहीं करेंगे इस कारण आर्ष वचनों को निबद्ध कर रहा हूं न कि सामर्थ्य के अभाव से।

"**योगचिंतामणि**" नामक ग्रन्थ वैद्यवरा ग्रगण्य श्री हर्षकीर्तिजी ने निर्मित किया। इसमें प्रत्येक रोग का निदान-पूर्व रूप का अच्छे प्रकार से कथन कर उनके ऊपर कषाय, रसायन, मात्रा, पाक, चूर्ण, तेल, गुटिका, अवलेह इत्यादि सर्वरोगों की औषधि विचारपूर्वक वर्णन की है और समस्त औषधि भी सुगमता से कही है।"[1] इस ग्रंथ में सात अधिकार हैं।

देवेन्द्रमुनि :—इनकी रचना बालग्रह चिकित्सा है।

इसमें बालकों की ग्रह पीड़ा की चिकित्सा का वर्णन है। ग्रन्थ प्रायः वाक्यरूप में है। इनका समय लगभग १२०० ई० है। इनके विषय में अधिक कोई जानकारी उपलब्ध नहीं है।

श्री हस्तिरुचि :—श्री हस्तिरुचि तपागच्छ के प्राज्ञोदयरुचि के शिष्य हितरुचि के शिष्य थे। इन्होंने अपने ग्रन्थ 'वैद्यवल्लभ' की ई० स० १६७० में रचना की।[2]

आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने लिखा है—"हस्तिरुचि कवि विरचित ग्रन्थ में आठ विलास हैं। अनेक योगों में एतद् हस्तकवेर्मतम्, कारितं कविना, कविना कथितं आदि का निर्देश होने से ये योग लेखक के अनुभूत हैं। ऐसा प्रतीत होता है। स्त्रियों के लिये गर्भपात तथा गर्भनिवारण के अनेक योग हैं। स्त्रियों का धातुरोग (२/१७) सम्भवतः श्वेत प्रदर है। सोरा (४/१६) सूर्यक्षार के नाम से है। विजया (५।४), अहिफेन (४।२०, ५।४) और अकरकरा (४।२३) भी हैं। इच्छाभेदी, सर्वकुष्ठारि आदि अनेक रस प्रयोग भी हैं। अहिफेन, सोमल (शंखिया), रक्तिका, धत्तूर आदि के विष को शान्त करने के उपाय कहे गये हैं। पादव्रण में एक लेप का विधान है जिसमें मोम, राल, साबुन और मक्खन है। (८।२६)।[3]

हस्तिरुचि के समय के सम्बन्ध में आचार्य श्री प्रियव्रत शर्मा ने लिखा है:—"ग्रन्थ के अंत में एक वटी मुरादिसाह वटी है, जिससे लेखक मुरादशाह का समकालीन या परवर्ती प्रतीत होता है। मुराद औरंगजेब का भाई था जो **१६६१** ई० में मारा गया। पूना की एक पाण्डुलिपि में प्रदत्त सूचना के अनुसार लेखक महोपाध्याय हितरुचिगणि का शिष्य था और तपागच्छ का निवासी था। इसमें ग्रन्थ रचना का काल सं० १७२६ (१६०३ ई०) दिया है। यह स्मरणीय है कि तपागच्छ का निवासी योगचिंतामणि प्रणेता हर्षकीर्ति भी था। सम्भवतः दोनों समकालीन हों किन्तु योगचिंतामणि पहले बना होगा, क्योंकि उसका एक श्लोक तत्रस्थ दूसरी पाण्डुलिपि (सं० २८२) में उद्धृत है।"[4] आचार्य प्रियव्रत शर्मा ने यहां पर भी तपागच्छ के संबंध में भ्रमोत्पादक बात कही है। तपागच्छ स्थान न होकर श्वेताम्बर जैन धर्मावलम्बियों का एक गच्छ है। ऐसा लगता है कि आचार्य प्रियव्रत शर्मा जैन परम्पराओं से परिचित नहीं हैं, अन्यथा वे ऐसा नहीं लिखते। आयुर्वेद के क्षेत्र में हस्तिरुचि का योगदान महत्वपूर्ण माना जाता है। वैद्यवल्लभ के वर्ण्य विषयों को देखते हुए पुस्तक बहुत उपयोगी लगती है।

वीरसिंह देव—जैन ग्रंथावली में इनके द्वारा रचित 'वीरसिंहावलोक' का उल्लेख है।[5] डा० हरिश्चन्द्र जैन ने अपने लेख 'आयुर्वेद के ज्ञाता जैनाचार्य' के अंतर्गत वीरसिंह का उल्लेख करते हुए लिखा है—वे १३वीं शताब्दी ए० डी० में हुए हैं। इन्होंने चिकित्सा की दृष्टि से ज्योतिष का महत्त्व लिखा है। 'वीरसिंहावलोक' इनका ग्रंथ है।[6]

नयनसुख:—इनके द्वारा रचित निम्नलिखित वैद्यक ग्रंथों का उल्लेख मिलता है—वैद्यमनोत्सव, सन्ताननिधि, सन्निपातकलिका; मालोत्तररास।

वैद्यमनोत्सव ग्रंथ पद्यमय रूप से निबद्ध है और दोहा, सोरठा व चौपाई छन्दों में इसकी रचना की गई है। ग्रन्थ की रचना संवत १६४१ में की थी। श्री अगरचन्द नाहटा के अनुसार इस ग्रन्थ को संवत् १६४६ वि० की चैत्र शुक्ला द्वितीया को अकबर के राज्य में सीहनंद नगर में समाप्त किया गया।[7]

---

१. योग चिंतामणि—लक्ष्मीवेंकेश्वर प्रेस बम्बई—प्रस्तावना।
२. The Jaina Artiquary Vol. xiii N. 1 July, 1947, page 100 & 355.
३. आयुर्वेद का वैज्ञानिक इतिहास, पृ० २६६.
४. वही, ४६६.
५. पृ० ३६०.
६. जैन जगत पृ. ५१ नवम्बर, १६७५.
७. हिन्दुस्तानी में प्रकाशित उनका लेख।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कविवर मलूकचन्द्र:—इनके द्वारा रचित '**वैद्यहुलास**' या '**तिब्बसाहाबी**' है। यह ग्रन्थ लुकमान हकीम के 'तिब्बसाहाबी' का हिन्दी पद्यानुवाद है। इस ग्रन्थ में 'श्रावक धर्मकुल को नाम मलूकचन्द्र' इन शब्दों के द्वारा अनुवादक ने अपने नाम का उल्लेख किया है। ग्रन्थ का रचनाकाल व रचना-स्थान दोनों अज्ञात है। इनका समय १९वीं शती के लगभग माना गया है। संभवतः ये बीकानेर के आसपास के निवासी थे और खरतरगच्छ से सम्बन्धित थे।

कविवर रामचन्द्र:—इनके द्वारा दो वैद्यक ग्रन्थ रचे गये ऐसा पता चलता है—(१) **रामविनोद**, तथा (२) **वैद्यविनोद**। दोनों ग्रन्थ हिन्दी में हैं।

रामविनोद की रचना संवत् १७२० में मार्गशीर्ष शुक्ला त्रयोदशी बुधवार को अवरंगशाह (औरंगजेब) के राज्यकाल में पंजाब के बन्नु देशवर्ती शक्की नगर में की गई। ग्रन्थ सात समुद्देशों में विभक्त है तथा इसमें १९८१ गाथाएँ हैं।

वैद्यविनोद की रचना सं० १७२६ में वैशाख सुदी १५ को मरोटकोट नामक स्थान में की गई थी जो उस समय औरंगजेब के राज्य में विद्यमान था।

ये खरतरगच्छीय यति थे। इनके गुरु का नाम पद्मरंग गणि था। इनका समय वि० सं० १७२०-५० माना जाता है। इनके तीन और वैद्यक ग्रन्थों का उल्लेख मिलता है—(१) **नाड़ी परीक्षा**, (२) **मान परिमाण**, और (३) **सामुद्रिक भाषा**।

कविवर लक्ष्मीवल्लभ:—कविवर लक्ष्मीवल्लभ द्वारा रचित '**कालज्ञान**' एक अनुवाद रचना है जो वैद्य शंभुनाथ-कृत ग्रन्थ का पद्यानुवाद है। इस ग्रन्थ से आपके वैद्यक विषय के सम्बन्धी गंभीर ज्ञान की झलक सहज ही मिल जाती है। इस ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १७४१ है। इनका जन्म संवत् १६९० और १७०३ के बीच होना ज्ञात होता है। इन्होंने सं० १७०७ के आसपास दीक्षा ली थी। इनकी अधिकांश रचनाएँ सं० १७२० से १७५० के बीच लिखी गई थी। इनकी छोटी-बड़ी लगभग पचास से भी अधिक रचनाएँ हैं।

कविवर मान:—ये खरतरगच्छीय भट्टारक जिनचंद्र के शिष्य बाचक सुमति सुमेर के शिष्य थे। ये बीकानेर के रहने वाले थे। वैद्यक पर इनकी दो रचनाएँ प्रसिद्ध हैं—**कविविनोद** और **कविप्रमोद**। '**वैद्यक सार संग्रह**' भी इनकी अन्य रचना बताई जाती है। दोनों ग्रन्थों से लेखक के वैद्यक ज्ञान का अच्छा परिचय मिलता है। कविविनोद का रचनाकाल १७४१ है। कवि प्रमोद सं० १७४५ वैशाख शुक्ला ५ को लाहौर में रची गयी।

समरथ :—इनके द्वारा रचित ग्रन्थ **रसमञ्जरी** है। इसका रचनाकाल सं० १७६४ है। ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति श्री अगरचन्द नाहटा के संग्रह में है। ग्रन्थ की पूर्ण प्रति उपलब्ध नहीं है। उपलब्ध प्रति अपूर्ण है। ग्रन्थ में कुल दस अध्याय बताये जाते हैं।

मुनिमेघ:—इनका ग्रन्थ '**मेघविनोद**' आयुर्वेद की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ की रचना फाल्गुन शुक्ला १३ सं० १८३५ में हुई। मुनि मेघविजय यति थे। इनका उपाश्रय फगवाड़ा नगर में था। इस ग्रन्थ की रचना का स्थान फुगुआनगर है जो फगवाड़ा के अन्तर्गत ही था। फगवाड़ा नगर तत्कालीन कपूरथला स्टेट के अन्तर्गत आता था।

यति गंगाराम :—इन्होंने **लोलिम्बराज** नामक वैद्यक ग्रन्थ लिखा है। इसके अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह इसी नाम के संस्कृत ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद है। इस ग्रन्थ का दूसरा नाम '**वैद्यजीवन**' है। ग्रन्थ का रचनाकाल सं० १८७२ है। इनका दूसरा ग्रन्थ '**सूरतप्रकाश**' है जिसका रचनाकाल सं० १८८३ है और जिसे '**भाव-दीपक**' भी कहा जाता है। इसमें विभिन्न रोगों के चिकित्सार्थ अनेक योगों का उल्लेख है। इनका तीसरा ग्रन्थ '**भाव-निदान**' है। यह आयुर्वेदीय निदान पद्धति की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। इस ग्रन्थ का रचना-काल सं० १८८८ है। ग्रन्थों में लेखक ने अपना कोई परिचय नहीं दिया है।

श्री यशकीर्ति :—ये बागड़ संघ के रामकीर्ति के शिष्य विमलकीर्ति के शिष्य थे। इन्होंने **जगत्सुन्दरी प्रयोगमाला**' नामक वैद्यक ग्रन्थ लिखा है। इस ग्रन्थ में ४२ अध्याय हैं। ग्रन्थ प्राकृत में है और औषधियों के सूत्र, जादू-टोना, वशीकरण तथा जन्म-मंत्र के समान अन्य विषयों से सम्बन्धित जानकारी विश्वज्ञान-कोश की भांति प्रदान करता है।

श्रीहंसराज मुनि :—ये खरतरगच्छ के वर्द्धमान सूरि के शिष्य थे। इनका समय १७वीं सदी ज्ञात होता है। इनका '**भिषक्चक-चित्तोत्सव**' जिसे '**हंसराज निदान**' भी कहते हैं, चिकित्सा-विषयक ग्रन्थ है। ग्रन्थारम्भ में 'श्री पार्श्वनाथायनमः' लिखकर सरस्वती प्रभृति और धन्वन्तरि की वंदना है। ग्रन्थ प्रकाशित हो चुका है।

इनके अतिरिक्त कुछ उल्लेखनीय विद्वानों के नाम इस प्रकार हैं जिन्होंने आयुर्वेद सम्बन्धी ग्रन्थों की रचना की है :—

विनयमेरुगणि, रामलाल महोपाध्याय, दीपकचन्द्रवाचक, महेन्द्र जैन, जिनसमुद्रसूरि, जोगीदास चैनसुख यति, पीताम्बर, ज्ञानसागर, लक्ष्मीचंद जैन, विश्राम, जिनदास वैद्य, धर्मसी, नारायणशेखर जैनाचार्य, गुणाकर और जयरत्न। यदि विशेष शोध कार्य किया जाए तो इस विषय पर बहुत सामग्री उपलब्ध हो सकती है। इस दिशा में विद्वानों को आवश्यक प्रयास करना चाहिये।

———

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org